SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

भारत की कृषि नीति एवं विकास : एक अध्ययन

आशा यादव, (Ph.D.), वाणिज्य विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दतिया, मध्यप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
आशा यादव, (Ph.D.), वाणिज्य विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दतिया, मध्यप्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

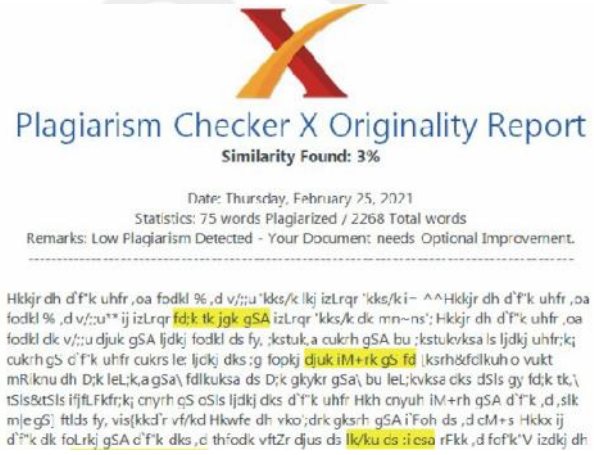

Received on : 24/02/2021
Revised on : -----
Accepted on : 03/03/2021
Plagiarism : 03% on 25/02/2021

Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 3%

Date: Thursday, February 25, 2021
Statistics: 75 words Plagiarized / 2268 Total words
Remarks: Low Plagiarism Detected - Your Document needs Optional Improvement.

शोध सार

प्रस्तुत शोध पत्र ''भारत की कृषि नीति एवं विकास: एक अध्ययन'' पर प्रस्तुत किया जा रहा है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य भारत की कृषि नीति एवं विकास का अध्ययन करना है। सरकार विकास के लिए योजनाएं बनाती है। इन योजनाओं से सरकार नीतियाँ बनाती है कृषि नीति बनाते समय सरकार को यह विचार करना पड़ता है कि खेती–किसानी व अनाज उत्पादन की क्या समस्याएं हैं? किसानों के क्या हालात हैं? इन समस्याओं को कैसे हल किया जाए? जैसे–जैसे परिस्थितियाँ बदलती है वैसे सरकार को कृषि नीति भी बदलनी पड़ती है। कृषि एक ऐसा उद्यम है, जिसके लिए अपेक्षाकृत अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। पृथ्वी के एक बड़े भाग पर कृषि का विस्तार है। कृषि को एक जीविका अर्जित करने के साधन के रूप में तथा एक विशिष्ट प्रकार की जीवन–पद्धति के रूप में देखा जा सकता है। कृषक के जीवन के सभी पक्ष कृषि से जुड़े होते हैं। जब कृषि को एक उद्योग के रूप में माना जाता है, तब कृषि प्रक्रिया से कृषक का जीवन सम्बद्ध नहीं रहता, उद्योग के रूप में कृषि का मूल उद्देश्य व्यापार होता है, इसमें उत्पादन पर अधिक ध्यान दिया जाता है। नवीन कृषि नीतियों के कारण कृषकों को अधिक लाभ मिल रहा है।

मुख्य शब्द

कृषि नीति एवं विकास.

भारत देश जब अंग्रेजी शासन से आजाद हुआ तब हमारे अधिकांश किसानों के हालात बहुत बुरे थे। भारत के हर 100 व्यक्तियों में से लगभग 75 व्यक्ति कृषि पर निर्भर थे, पर इनमें आधे से अधिक लोगों के पास जमीन नहीं थी या दो एकड़ से कम जमीन थी। चंद बड़े जमींदारों के पास कुछ खेतिहर भूमि का आधे से अधिक हिस्सा था कृषि उत्पादन भी बहुत कम था। एक एकड़

में 2–3 बोरी अनाज से अधिक नहीं होता था। बहुत कम जमीन सिंचित थी। बहुत से गरीब किसान और मजदूर भुखमरी और कुपोषण के शिकार थे। हर साल कहीं न कहीं सूखा पड़ता था या बाढ़ आती थी। गरीब किसानों के पास इतना अनाज नहीं रहता था के वे ऐसे बुरे दिनों का सामना कर पाएं। अकाल में लाखों लोग भूख और बीमारी के शिकार हो जाते थे। राहत की व्यवस्था करने के लिए सरकार के पास अनाज का भंडार नहीं था। अनाज की कमी के कारण भारत को विदेशों से अनाज मंगवाना पड़ रहा था।[1]

सरकार के सामने दो खास उद्देश्य थे। एक अनाज उत्पादन बढ़ाना और बुरे समय के लिए भंडार भी करना, दूसरा गरीब किसानों और मजदूरों को जीवन के पर्यन्त साधन उपलब्ध कराना ताकि वे भूखमरी का शिकार न बने। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए वर्ष 1950 से 1965 के बीच सरकार ने कुछ कदम उठाए, जैसे[2]:

1. सिंचाई और बिजली के लिए बड़े–बड़े बांध बनाए जैसे भाखड़ा नंगल पंजाब में, दामोदर घाटी पश्चिम बंगाल में, हीराकुंड उड़ीसा में, नागार्जुन सागर आंध्रप्रदेश में गांधी सागर और मध्यप्रदेश में मुख्य थे।
2. रासायनिक खाद के कारखाने खोले, किसानों तक खाद पहुँचाने के लिए गाँवों में सहकारी समितियाँ बनाई।
3. कृषि अनुसन्धान केन्द्र और विश्वविद्यालय खोले गए।

इन प्रयासों के कारण पहले से ज्यादा जमीन की सिंचाई हो पाई एवं अधिक जमीन पर खेती होने लगी। नतीजा यह हुआ कि पूरे देश में अनाज का उत्पादन बढ़ने लगा पर अचानक बढ़ा हुआ उत्पादन भी अनाज की कमी को पूरा नहीं कर पा रहा था। दूसरे देशों से अनाज मंगाना पड़ता था, और अनाज के आयात की मात्रा बढ़ती गई। भारत के पास अनाज खरीदने के लिए ज्यादा पैसे नहीं थे तब भारत ने दूसरें देशों से खासकर, अमरीका से, अनाज उधार लेना शुरु किया। देश के नेता और कृषि विशेषज्ञ इस बात से चिन्तित थे कि भारत को उधार पर बहुत सा अनाज आयात करना पड़ रहा है। देश की हालत साहूकार से उधार लेने वाले किसान जैसी होने लगी थी। जिन देशों से हम अनाज उधार लेते थे, वे हमारे ऊपर दबाव डालने लगे और अपनी शर्ते मनवाने की कोशिश करने लगे।[3]

दूसरे देश इस बात का दबाव डालने लगे कि हम उन्हीं तरीकों से खेती करने लगे जो उनके यहा अपनाएं जा रहे थे। उनके विशेषज्ञों ने ऐसे बीज बनाए थे जो एक एकड़ सिंचित जमीन पर 15 से 20 बोरे अनाज तक पैदा कर सकते थे। वे यह मांग करने लगे कि भारत में भी इन्हीं बीजों से खेती करें। उन देशों का कहना था कि भारत में पहले सिंचाई वाली जमीन पर नए बीजों का इस्तेमाल शुरू करना चाहिए। फिर धीरे–धीरे सभी इलाकों में सिंचाई फैला कर सभी जगह नए बीजों का इस्तेमाल होना चाहिए।[4]

पर समस्या यह थी कि नए बीजों के लिए काफी ज्यादा रासासनिक खाद डालने की जरूरत थी जो भारत में तब बहुत कम बनती थी। दूसरी समस्या यह थी कि नए बीजों की फसलों में बीमारियां ज्यादा आसानी से लगती थी। उनके लिए कीटनाशक दवा का ज्यादा इस्तेमाल करना पड़ता था, ये दवाऐं भी तब भारत में कम ही बनती थी।[5]

अमीर देश चाहते थे कि भारत रासायनिक खाद एवं दवाएं उनके देश से खरीदें और उनके उद्योगपतियों को इजाजत दें तो वे भारत में ही खाद व दवा के कारखाने डाल लें। भारतीय नेता बड़ी दुविधा में थे कि अभी तक विदेशों से अनाज ही खरीद रहे थे जब खाद और कीटनाशक दवाएं भी खरीदनी पड़े तो और पैसों की जरूरत होगी। पैसे नहीं है तो फिर उधार लेने का सिलसिला चलेगा। इसी तरह भारत इन देशों पर निर्भर बना रहेगा और आत्मनिर्भर नहीं बन पाएगा, जबकि स्वतंत्रता के बाद भारत यह चाहता था कि वह अपनी जरूरत की चीजें खुद बनाए।[6]

एक तरफ यह भी सच था कि नए बीजों से अनाज की पैदावार बहुत बढ़ जाएगी और भारत जल्दी ही अनाज के मामले में आत्मनिर्भर बन पाएगा। धीरे–धीरे खाद और कीटनाशक दवाओं के कारखाने भारत में ही लगाए जा सकते थे। देश में इन सब बातों पर बहुत चर्चा और बहस हुई। दूसरी तरफ, अनाज निर्यात देशों की सरकारे अनाज उधार देने में आनाकानी करने लगी थी। ऐसे में देश में अनाज का उत्पादन जल्दी से बढ़ाना बहुत जरूरी हो गया था।

सन् 1965–66 में जब भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध छिड़ा हुआ था। उस साल वर्षा भी बहुत कम हुई थी, और देश में भयंकर सूखा पड़ा हुआ था। अनाज की बहुत कमी थी और सब जगह अकाल मंडरा रहा था। ऐसी संकट की हालत में भी जिन देशों से भारत अनाज उधार लेता था वे देश अनाज उधार देने पर आनाकानी करने लगे। उन देशों की सरकारों ने भारत भेजे जा रहे अनाज के जहाजों को रोक लिया ताकि वे भारत से अपनी बात मनवा सकें।[7]

सन् 1966–67 में भारत सरकार ने नई कृषि नीति का ऐलान किया । यह नीति मुख्य रूप से नए किस्म के संकर बीजों के प्रसार से संबंधित थी। इस नीति को हरित क्रांति प्रारम्भ करने का श्रेय नोबल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर नारमन बोरलांग को जाता है। हरित क्रांति से अभिप्राय देश के सिंचित एवं असिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उपज देने वाले संकर तथा बोने बीजों के उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि करना था।[8]

हरित क्रांति भारतीय कृषि में लागू की गई उस विकास विधि का परिणाम है जो 1960 के दशक में पारस्परिक कृषि को आधुनिक तकनीकी द्वारा स्थापित किए जाने के रूप में सामने आई क्योंकि कृषि क्षेत्र में यह तकनीकि एकाएक आई, तेजी से इसका विकास हुआ और थोड़े ही समय में इससे इतने आश्चर्यजनक परिणाम निकले कि देश के योजनाकारों कृषि विशेषज्ञों तथा राजनीतिज्ञों ने इस अप्रत्याशित प्रगति को ही ''हरित क्रांति'' की संज्ञा प्रदान कर दी।[9] हरित क्रांति की संज्ञा इसलिए भी दी गई क्योंकि इसके फलस्वरूप भारतीय कृषि निर्वाह स्तर से ऊपर उठकर आधिक्य स्तर पर आ चुकी थीं।

हरित क्रांति के फलस्वरूप देश के कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। कृषि आगतों में हुए गुणात्मक सुधार के फलस्वरूप देश में कृषि उत्पादन बढ़ा हैं खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता आई है। व्यवसायिक कृषि को बढ़ावा मिला है। कृषकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है। कृषि आधिक्य में वृद्धि हुई है। हरित क्रान्ति के फलस्वरूप गेहूं, गन्ना, मक्का तथा बाजरा आदि फसलों के प्रति हेक्टेयर उत्पादन एवं कुल उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है। हरित क्रांति की उपलब्धियों को कृषि में तकनीकी एवं संस्थागत परिवर्तन एवं उत्पादन में हुए सुधार के रूप में निम्नवत देखा जा सकता है।

नवीन कृषि नीति के परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों के उपभोग की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। 1960–61 में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग प्रति हेक्टेयर दो किलोग्राम होता था, जो 2008–2009 में बढ़कर 128. 6 किग्रा प्रति. हेक्टेयर हो गया है। इसी प्रकार 1960–61 में देश में रासायनिक खादों की कुल खपत 2.92 लाख टन थी, जो बढ़कर 2008–2009 में 249.09 लाख टन हो गई।

देश में अधिक उपज देने वाले उन्नतशील बीजों का प्रयोग बढ़ा है तथा बीजों की नई किस्मों की खोज की गई है। अभी तक अधिक उपज देने वाला कार्यक्रम गेहूँ, धान, बाजरा, मक्का व ज्वार जैसी फसलों पर लागू किया गया है, परन्तु गेहूँ में सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई है। वर्ष 2008–2009 में 1,00,000 क्विंटल प्रजनक बीज तथा 9.66 लाख क्विंटल आधार बीजों का उत्पादन हुआ तथा 190 लाख प्रमाणित बीज वितरित किये गये।

नई विकास विधि के अन्तर्गत देश में सिंचाई सुविधाओं का तेजी के साथ विस्तार किया गया है। 1951 में देश में कुल सिंचाई क्षमता 223 लाख हेक्टेयर थी, जो बढ़कर 2008–2009 में 1,073 लाख हेक्टेयर हो गई।

नवीन कृषि विकास विधि के अन्तर्गत पौध संरक्षण पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इसके अन्तर्गत खरपतवार एवं कीटों का नाश करने के लिये दवा छिड़कने का कार्य किया जाता है तथा टिड्डी दल पर नियन्त्रण करने का प्रयास किया जाता है। वर्तमान में समेकित कृषि प्रबन्ध के अन्तर्गत परिस्थितिकी अनुकूल कृषि नियंत्रण कार्यक्रम लागू किया गया है।

बहुफसली कार्यक्रम का उद्देश्य एक ही भूमि पर वर्ष में एक से अधिक फसल उगाकर उत्पादन को बढ़ाना है। अन्य शब्दों में भूमि की उर्वरता शक्ति को नष्ट किये बिना, भूमि के एक इकाई क्षेत्र से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करना ही बहुफसली कार्यक्रम कहलाता हैं 1966–1967 में 36 लाख हेक्टेयर भूमि में बहुफसली कार्यक्रम लागू किया

गया। कार्यक्रम समय में भारत की कुल सिंचित भूमि के 71 प्रतिशत भाग पर यह कार्यक्रम लागू है।

नई कृषि विकास विधि एवं हरित क्रान्ति में आधुनिक कृषि उपकरणों, जैसे : ट्रैक्टर, थ्रेसर, हार्वेस्टर, बुलडोजर, तथा डीजल एवं बिजली के पम्पसेटों आदि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है । इस प्रकार कृषि में पशुओं तथा मानव शक्ति का प्रतिस्थापन संचालन शक्ति द्वारा किया गया है, जिससे कृषि क्षेत्र के उपयोग एवं उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

कृषकों में व्यवसायिक साहस की क्षमता को विकसित करने के उद्देश्य से देश में कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने की योजना लागू की गई है।

सरकारी नीति के अन्तर्गत 17 राज्यों में कृषि उद्योग निगमों की स्थापना की गई थी। इन निगमों का कार्य कृषि उपकरणों व मशीनरी की पूर्ति तथा उपज प्रसंस्करण एवं भण्डारण को प्रोत्साहन देना है। इसके लिये यह निगम किराया क्रय पद्धति के आधार पर ट्रेक्टर, पम्पसेट एवं अन्य मशीनरी को वितरित करता है।

भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत कृषि योग्य भूमि को क्षरण से रोकने तथा उबड़–खाबड़ को समतल बनाकर कृषि योग्य बनाया जाता है। यह कार्यक्रम उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात तथा मध्यप्रदेश में तेजी से लागू है।

हरित क्रांति अथवा भारतीय कृषि में लागू की गई नई विकास विधि का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि देश में फसलों के क्षेत्रफल में वृद्धि, कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि हों गई। विशेषकर गेहूँ, बाजरा, धान, मक्का तथा ज्वार के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप खाद्यान्नों में भारत आत्मनिर्भर सा हो गया। हरित क्रांति के फलस्वरूप खेती के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन हुआ और खेती व्यवसायिक दृष्टि से की जाने लगी है, जबकि पहले सिर्फ पेट भरने के लिये की जाती थी। देश में गन्ना, कपास, पटसन तथा तिलहनों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। वर्तमान समय में देश में बागवानी फसलों, फलों, सब्जियों तथा फूलों की खेती को भी बढ़ावा दिया जा रहा है।

नवीन प्रौद्योगिकी तथा कृषि के आधुनिकीकरण ने कृषि तथा उद्योग के परस्पर सम्बन्ध को और भी मजबूत बना दिया है। पारम्परिक रूप में यद्यपि कृषि और उद्योग की अग्रगामी सम्बन्ध पहले से ही प्रगाढ़ था, क्योंकि कृषि क्षेत्र द्वारा उद्योग को अनेक आगत उपलब्ध कराये जाते हैं, परन्तु इन दोनों में प्रतिगामी सम्बन्ध बहुत ही कमजोर था, क्योंकि उद्योग निर्मित वस्तुओं का कृषि में बहुत ही कम उपयोग होता है, परन्तु कृषि के आधुनिकीकरण के फलस्वरूप अब कृषि के उद्योग निर्मित आगतों, जैसे कृषि यन्त्र एवं रासायनिक उर्वरक आदि की मांग में भारी वृद्धि हुई है, जिसमें कृषि का प्रतिगामी सम्बन्ध सुदृढ़ हुआ। अन्य शब्दों में कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र के सम्बन्ध में अधिक मजबूती आई है, जिसमें कृषि नीति की महत्वपूर्ण भूमिका है।

निष्कर्ष

भारत में कृषि नीति के विकास को मोटे तौर पर पांच चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है पहला चरण 1951 से 1965 की अवधि से सम्बद्ध है, जिसमें खेती पर सीमित ध्यान केंद्रित करते हुए उद्योग को बढ़ावा दिया गया। दूसरे चरण (1966–1981) में हरित क्रांति प्रौद्योगिकी या एचवाईवी टेक्नोलाजी शुरू की गई और देश में बड़े पैमाने पर उसे अपनाया गया। इस चरण के दौरान प्रौद्योगिकी के समीकरण, समुचित नीतिगत फ्रेमवर्क और उपयुक्त संस्थानों के जरिये भारत ने खाद्य के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हासिल की। तीसरे चरण (1981 से 1991) के दौरान हरित क्रांति प्रौद्योगिकी का देशभर में प्रसार हुआ जिससे अधिक समानता के साथ अंतर–क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा मिला। चौथे चरण 1992 में वृहद–आर्थिक सुधारों के साथ शुरू हुआ और 2004 तक चला। इस चरण के दौरान अधिमूल्य विनिमय दर व्यवस्था में सुधार के जरिये कृषि विरोधी पक्षपात में कमी आई इस दौरान खेती में सरकार की भूमिका कम करने का प्रयास भी किया गया। प्रारंभिक दौर में सार्वजनिक निवेश में कमी आने से इस चरण के दौरान खेती के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 2005 से अंतिम चरण शुरू होता है जब खेती में सरकार की भूमिका बढ़ी और अनेक कार्यक्रम शुरू किए गए।

संदर्भ सूची

1. *प्रतियोगिता दर्पण,* मासिक पत्रिका (लेख भारतीय कृषि विकास) अक्टूबर 2009, पृ. 733।
2. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृष्ठ 258।
3. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृष्ठ 260।
4. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृ. 261।
5. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृ. 262।
6. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृ. 263।
7. मिश्र, श्रीकान्त, (1999) *भारत में कृषि विकास,* पृ. 264।
8. जैन, टी.आर, ओहरी वी.के., माझी, बी.डी., (2010) *भारत में आर्थिक विकास नीति,* वी.के. पब्लिकेशन, पृ. 354।
9. Vandana Shiva; (1991) *The Violence of Green Revolution* : Third World Agriculture, Ecology and Politics, Zed Books, P. 65.

****